International Journal of Applied Research 2017; 3(3): 668-671

**ISSN Print:** 2394-7500
**ISSN Online:** 2394-5869
**Impact Factor:** 5.2
IJAR 2017; 3(3): 668-671
www.allresearchjournal.com
Received: 12-01-2017
Accepted: 13-02-2017

**डॉ.सुनीता सैनी**
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

**Correspondence**
**डॉ.सुनीता सैनी**
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

# महर्षि दयानंद का एवं पातञ्जल योग दर्शन

## डॉ.सुनीता सैनी

**प्रस्तावना**

सत्यार्थ प्रकाश के अंतिम पृष्ठ पर स्वामी दयानंद के विचार उद्धृत हैं -कि अपने मंतव्य उसी को जानता हूं कि जो तीन काल में सब को एक सा मानने योग्य है। मेरा कोई नवीन कल्पना व मत-मतांतर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है। किंतु जो सत्य है उसको मानना-मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझको अभीष्ट है।

अपने मंतव्य को समाज के समक्ष रखने के लिए उन्होंने अनेक ग्रंथों के उद्धरण प्रमाण रुप में दिए हैं प्रश्न यह है कि किन ग्रंथों को प्रमाण रूप में उद्धृत करते हैं और क्यों? इसका उत्तर वह स्वयं ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के ग्रन्थप्रामाण्याप्रामाण्य विषय में देते हैं कि - जो जो ग्रंथ सृष्टि के आदि से लेकर आज तक पक्षपात और रागद्वेष रहित सत्य धर्मयुक्त सब लोगों के प्रिय प्राचीन विद्वान आर्य लोगों ने स्वतः प्रमाण अर्थात अपने आप ही प्रमाण, परतः प्रमाण अर्थात् वेद और प्रत्यक्ष अनुमानादि आदि से प्राणभूत है।

इस प्रकार ऋषि दयानंद के अनुसार वेदोक्त ज्ञान ईश्वर, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और सर्वविद्या युक्त है इसलिए उनका कथन प्रमाण के योग्य है और वही स्वतः प्रमाण है परंतु इसका यह अर्थ नहीं की जीवोक्त अन्य ग्रंथ प्रमाण के योग्य नहीं। जो ग्रंथ वेद के अविरुद्ध हैं वे भी परतः प्रमाण अर्थात् वेदों के अनुकूल ही होने से प्रमाण और विरुद्ध होने से अप्रमाण हो सकते हैं।

ऋषि दयानंद कोई भी बात प्रमाण के बिना नहीं कहते हैं। अकेले सत्यार्थ प्रकाश में कुल 377 ग्रंथों का हवाला है जिसमें 290 पुस्तकों के प्रमाण दिए गए हैं। इस ग्रंथ में 1542 वेद मंत्रों या श्लोकों का उदाहरण दिया गया है और संपूर्ण प्रमाणों की संख्या 1886 है।[1]

इन्हीं प्रामाणिक ग्रंथों की कोटी में वह पतंजलि मुनिकृत सूत्र और व्यासभाष्य सहित योगदर्शन को प्रमाण रूप में स्वीकार करते हैं, जबकी हठदीपिका आदि विषयक ग्रंथ को वह योगशास्त्र के विरुद्ध समझते हैं।[2]

पातंजल योगदर्शन कुल चार पादों में विभक्त है। प्रथम समाधि पाद के कुल 51 सूत्रों में योग का लक्षण, चित्तवृत्तियाँ, योग के उपाय, अन्तराय तथा संप्रज्ञात व असंप्रज्ञात समाधि का मुख्य रुप से वर्णन है। द्वितीय साधन पाद के 55 सूत्रों में क्रियायोग, पंचक्लेश तथा प्रत्याहार पर्यन्त के पञ्च अंगो का वर्णन है। तृतीय विभूतिपाद के 55 सूत्रों में धारणा, ध्यान, समाधि नामक योगाङ्गाओं का तथा इन से प्राप्त होने वाली सिद्धियों का वर्णन मुख्य है। चतुर्थ पाद कैवल्य पाद है जिसमें 34 सूत्रों में कैवल्य प्राप्ति तथा स्वरूप तथा जीवन मुक्ति की स्थिति का वर्णन मुख्य है।

महर्षि दयानंद ने पतंजलि कृत सूत्रों तथा भाष्य को अनेक स्थानों पर उद्धृत किया है। यद्यपि ये उद्धरण किसी निश्चित क्रम में नहीं है परंतु अनेक स्थलों पर उन सूत्रों और भाष्यों का प्रमाण देना सिद्ध करता है कि उन्हें पातंजल योगदान कितना अभीष्ट है।

ब्रह्मचारियों के लिए प्राणायाम करना आवश्यक है। स्वामदयानन्द 'प्राणामायादशुद्धि क्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः' योगसूत्र को उद्धृत करते हुए कहते हैं कि 'जब मनुष्य प्राणायाम करता है तब प्रतिक्षण उत्तरोत्तर काल में अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश होता चला जाता है।' विधारणाभ्यामं वा प्राणस्य' सूत्र से प्राणायाम विधि को बतलाया गया है। प्राणायाम करने का फल ब्रह्मचारियों को प्राप्त होता है क्योंकि प्राणायाम से मनुष्य शरीर में वीर्य वृद्धि को प्राप्त स्थिर बल, पराक्रम, जितेंद्रियता तथा सब शास्त्रों को थोड़े ही काल में ग्रहण कर लेता है।[3]

इसके साथ-साथ अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह आदि यमो तथा शौच, संतोष तप, स्वाध्याय एवं ईश्वर प्रणिधान आदि पंच नियमों का पालन भी ब्रह्मचारी के लिए आवश्यक है ताकि वह सदा उन्नति को प्राप्त कर सके।[4]

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के उपासना विषयक प्रकरण में जिस रीति से उपासना करनी चाहिए उसके बारे में लिखते हैं - " तत्र शुद्ध एकान्तेऽभीष्टे देशे शुद्ध मानसः समाहितो भूत्वा,सर्वाणीन्द्रियाणि मनश्चैकाग्रीकृत्, सच्चिदानंदस्वरूपमन्तर्यामिनं न्यायकारिणं परमात्मानंसचिन्त्य, तत्रात्मानं नियोज्य च, तस्यैव स्तुतिप्रार्थनानुष्ठाने स्म्यककृवोपासनयेश्वरे पुनः पुनः स्वत्मानं संलगयेत्। अत्र पतन्जलिमहामुनिना स्वकृत्सूत्रेषु वेदव्यास कृतभाष्ये चायमनुक्रमो योगशास्त्रे प्रदर्शितः।"[5]

योग शास्त्र में अष्टांग योग कैवल्य प्राप्ति की प्रक्रिया है महर्षि दयानंद के लिए यह उपासना योग है, ईश्वर की उपासना की रीति है इसी उपासना योग की रीति के अंतर्गत पातंजल योगदर्शन के प्रथम व द्वितीय पदों के अधिकांश सूत्रों तथा विभूति पाद के प्रथम चार सूत्रों को उद्धृत किया गया है। मुक्ति विषय के अंतर्गत कई कैवल्यपाद के कुछ सूत्र उद्धृत हैं। इस पूरे विवरण में विभूति पाद के विशेष सूत्रों को छोड़ दिया गया जहां धारणा, ध्यान, समाधि रूप संयम से विभिन्न अलौकिक सिद्धियां प्राप्त होती हैं इसके दो कारण हो सकते हैं। प्रथम तो वह कि स्वभावतः ऋषि दयानंद को अलौकिक सिद्धियों पर संदेह हो और इसलिए उन्होंने इस पूरे प्रकरण को छोड़ दिया वह दूसरा कारण हो सकता है कि स्वयं पतंजलि इन सिद्धियों को मोक्ष मार्ग में बाधक मानते हैं वह 'ते समाधावुसर्गा व्युथाने सिद्धयः' अर्थात् विभूतियां समाधि में अंतराय रूप और उत्थान में ही सिद्ध रूप हैं। मोक्ष मार्ग में बाधक विभूतियों सिद्धियों का वर्णन ऋषि दयानंद को अभीष्ट नहीं रहा होगा।

यमों एवं नियमों के अनुष्ठान से मिलने वाले फलों का वर्णन यद्यपि वे भाषा अनुसार ही करते हैं फिर भी अलौकिक सिद्धियों को यहां भी स्वीकार नहीं करते ।

यथा तप के अनुष्ठान से ' कायेन्द्रियसिद्धिक्षयात् तपसः' कहा गया है अर्थात् तप से अशुद्धि का नाश हो जाने से अणिमादिकायसिद्धियां तथा दूरश्रवण आदि इंद्रिय सिद्धियां प्राप्त होती हैं।7 परंतु ऋषि दयानंद सूत्र का अर्थ करते हुए कहते हैं कि तप से शरीर में इंद्रियां अशुद्धि के क्षय से दूर होकर सदा रोगरहित रहते हैं।[8]

इसी प्रकार 'अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्' सूत्र में कहा गया है कि अस्तेय के प्रतिष्ठित हो जाने पर सभी दिशाओं में स्थित रत्नों योगी के पास उपस्थित हो जाते हैं। यहां ऋषि दयानंद रत्नों का अर्थ उत्तमोत्तम पदार्थों से लेते हैं जो अस्तेय के प्रतिष्ठित हो जाने पर योगी को यथायोग्य प्राप्त होने लगतें हैं। कतिपय स्थल ऐसे भी मिलते हैं जहां सूत्रों के अर्थ में ऋषि स्वयं के मंतव्य जोड़ देते हैं तथा - 'अनित्याशुचिदुःखात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिर्विद्या' अविद्या किस लक्षण व्याख्या में अशुचि पदार्थों को शुद्ध मानना जैसे तालाब, बावड़ी, कुंड, कुआं, नदी आदि तीर्थ और पाप छुड़ाने की बुद्धि करना, उनका चरणामृत पान, एकादशी आदि मिथ्या व्रतों में भूख प्यास आदि दुखों को सहना।[10]

**व्यास भाष्य के अनुसार** - ' ब्रह्मचर्य गुप्तेन्द्रियोपस्थस्य संयमः'11 महर्षि दयानंद के अनुसार ब्रह्मचर्य है - विद्या पढ़ने के लिए बाल्यावस्था से लेकर सर्वथा जितेंद्रिय होना, 25वें वर्ष से लेकर 48 वर्ष पर्यंत विवाह का करना, परस्त्री वेश्या आदि का त्यागना, सदा ऋतुगामी होना, विद्या के ठीक-ठीक पढ़ कर सदा पढ़ाते रहना और उपस्थ इंद्रिय का सदा नियम करना।

इसी प्रकार - 'विषयाणामर्जन रक्षणक्षयसङ्गहिंसा दोष दर्शनादस्वीकरणमपरिग्रह' भाषा के अनुसार विषयों की प्राप्ति, रक्षा, आसक्ति तथा हिंसा आदि दोषों को देखने के कारण उन विषयों को स्वीकारने करना अपरिग्रह है।13

ऋषि दयानंद की दृष्टि में विषय और अभिमान आदि दोषों से रहित होना अपरिग्रह है।[14] संतोष व तप नियमों की व्याख्या में स्पष्ट अंतर है यथा - व्यासभाष्य कृत - 'संतोषः सन्निहित साधनादधिकस्युपाक्दित्सा, तपो द्वन्द्व सहनम्, द्वन्द्वश्च जिघत्सापिपसे, शीतोष्णे, स्थानासने काष्ठमोनाकारमौने च, व्रतानि चैषांयथायोगं कृच्छ्रचैषोचान्द्रायण सान्तपनादीनि'[15]

**महर्षि दयानंद** - 'संतोषो धर्मानुष्ठानेन सम्यक् प्रसन्नता संपादनीया, तपः सदैव धर्मानुष्ठानमेव कर्तव्यम्' अर्थात् सदा धर्मानुष्ठान से पुरुषार्थ करने प्रसन्न रहना और दुख से शोकातुर न होना संतोष है किंतु आलस्य का नाम संतोष नहीं है। इसी प्रकार जैसे - सोने को अग्नि में तपाकर निर्मल कर देते हैं वैसे ही आत्मा व मन को धर्म आचरण और शुभ गुणों के आचरण रूप तप में निर्मल कर देना तप है।16 " स्वाध्यायादिष्टदेवता संप्रयोगः" सूत्र का भाष्य व्यास के अनुसार है - 'देवा ऋषयः सिद्धाश्च स्वाध्यायशीलस्य दर्शनं गच्छन्ति कार्ये चास्य वर्तन्ते इति'।17 ऋषि दयानन्द के अनुसार - "परमेश्वर के अनुग्रह के कारण जीव शीघ्र ही मुक्त हो को प्राप्त होता है।'18

योग का लक्षण चित्त, वृतियाँ, ईश्वर का स्वरूप अष्टांग योग का निरूपण, ऋषि दयानंद ने ईश्वरोपासना की रीति बतलाने के लिए यद्यपि आन्ततः ईश्वर उपासना भी मुक्ति के लिए ही है। वे कहते

हैं - इसी प्रकार परमेश्वर की उपासना करके, अविद्या आदि क्लेश तथा धर्माचरण आदि दुष्ट गुणों का निवारण करके, शुद्ध विज्ञान और धर्म आदि शुभ गुणों के आचरण से आत्मा की उन्नति करके जीव मुक्ति को प्राप्त हो जाता है।19 ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के 'मुक्ति विषय' में उन्होंने विभिन्न दर्शनों के प्रमाण देकर मोक्ष प्रक्रिया को समझाया है।

सर्वप्रथम उन्होंने पातंजल योगदर्शन के कुछ सूत्रों को उद्धतए किया है। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, व अभिनिवेश ये पञ्चक्लेश मोक्ष के साधन में सब दिन प्रवृत रहने से नष्ट हो जाते हैं।

ये अविद्या आदि अज्ञान हैं जब विद्या से अविद्या की निवृति होती है तब बंधन से छूटकर मुक्ति को प्राप्त होता है। कैवल्य प्राप्ति या मुक्ति के लिए ऋषि दयानंद ने पातंजल योगदर्शन के कुछ सूत्रों को एक स्थान पर उद्धृत किया है। यथा –

'तदभावात्संयोगाभावो हानं तद् दृशेः कैवल्यम्।
द्वैराग्यादपि दोष बीज क्षये कैवल्य।
सत्वपुरुषोः शुद्धि साम्ये कैवल्यमिति ।
तदा विवेकनिम्नं कैवल्यप्राग्भारं।।'

**तत्पश्चात् कैवल्य के लक्षण**

'पुरुषार्थ शून्यानां गुणयानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूप प्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।'

**पतंजलि कृत सूत्र का अर्थ है –** भोगापवर्गरूपी पुरुषार्थ से रहित सत्तवादी तीनों गुणों का अव्यक्त में प्रविलीन हो जाना कैवल्य है या चितिशक्ति क अपने रूप मे प्रतिष्ठित हो जाना कैवल्य है। इस सूत्र पर श्रीमद्वेदव्यास ने इस प्रकार भाष्य किया है कि "भोग व अपवर्ग सम्पादित कर चुकने वाले और इसलिए पुरुषार्थ रहित कार्यकारणात्मक महत् आदि प्रकृति विकृतिरूपी गुणों क जो अव्यक्त मे लय है, वही कैवल्य है। सवरूप मे प्रतिष्ठित अर्थात् फ़िर से पुरुष क बुद्धि से संबन्ध न होने के कारण चितिशक्ति हि रह जाति है। उसकी सर्वथा उसी प्रकार स्थिति बुद्धिसन्निधि रहित कैवल्य है।[20]

यहां कैवल्य की स्थिति दो दृष्टियों से वर्णित हैं - प्रथम गुणों की दृष्टि से तथा द्वितीय पुरुष से। सत्वादि गुणों का अव्यक्त में लीन हो जाना गुणों की दृष्टि से कैवल्य है। तथा पुरुष का बुद्धि से विच्छेद होकर केवल एकाकी रूप में रहना पुरुष से कैवल्य है।

महर्षि दयानंद ने इस सूत्र का अर्थ इस प्रकार किया है कि - कारण के सत्व, रज और तमोगुण और कार्य पुरुषार्थ से नष्ट होकर, आत्मा में विज्ञान और शुद्धि यथावत होकर, स्वरूपप्रतिष्ठा जैसा जीव का तत्व है वैसा ही स्वाभाविक शक्ति और गुणों से युक्त होकर शुद्ध स्वरूप परमेश्वर के विज्ञान प्रकाश और नित्य आनंद में जो रहना है, उसी को कैवल्य मोक्ष कहते हैं।[21]

कैवल्य का यह लक्षण उनके मुक्ति विषयक विचारों का संकेत करता है। जो विचार उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश के नवम समुल्लास में उद्घाटित किए हैं महर्षि दयानंद के अनुसार मुक्ति में जीव का लय नहीं होता। बल्कि जीव ब्रह्म में विद्यमान रहता है, केवल उसके स्थूल शरीर का नाश होता है और वह अव्याहात गति वाला होकर आनंद पूर्वक विचरता है। उस मुक्त जीव में बल, पराक्रम, आकर्षण, प्रेरणा, गति, भाषण, विवेचन, क्रिया, उत्साह, स्मरण, निश्चय, इच्छा, प्रेम, द्वेष, संयोग, विभाग, संयोजक, विभाजक, श्रवण, स्पर्शन, स्वागत, गंधग्रहण तथा ज्ञान इन 24 प्रकार का सामर्थ्य रहता है। इसी शक्ति से वह मुक्ति में सब आनंद भोग लेता है। उनके अनुसार जीव का नाश मुक्ति नहीं क्योंकि मुक्त जीव का यह है कि दुखों से छूटकर आनंदस्वरूप सर्वव्यापक, अनंत, परमेश्वर में जीवों का आनंद में रहना। वह मुक्ति भी नित्य नहीं है क्योंकि बंधन मुक्ति सदा नहीं रहती। 'तदत्यन्तविमोक्षोऽपवर्गः' क्योंकि जीव का सामर्थ्य, शरीर आदि पदार्थ व साधन परिमित हैं तो उसका फल अनंत नहीं हो सकता। अनित्य साधनों से प्राप्त मुक्ति नित्य नहीं हो सकती और वैसे भी यदि मुक्त जीव संसार में लौट कर न आए तो संसार का ही उच्छेद हो जाएगा। परंतु इसका यह अर्थ नहीं की मुक्ति नित्य नहीं तो इसके लिए श्रम करना भी व्यर्थ है क्योंकि वह मुक्ति अवस्था भी महाकल्प पर्यंत रहती है।[22]

**संदर्भ सूची**


1. सत्यार्थ प्रकाश और समग्रकांति - ज्वलंत कुमार महर्षि दयानंद निर्वाण शती स्मृति ग्रंथ, पृष्ठ 141
2. १. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका - पृष्ठ 542-543
   २. सत्यार्थ प्रकाश - पृष्ठ 47
3. सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास - पृष्ठ 25-28
4. सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास पृष्ठ - 33
5. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ - 416
6. पातंजल योगदर्शन – 3/37
7. पातंजल योगदर्शन – 2/43
8. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ – 429
9. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ – 425/439
10. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ - 439
11. पातंजल योगदर्शन – 2/30
12. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ - 426
13. पातंजल योगदर्शन – 2/30
14. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ - 426
15. पातंजल योगदर्शन – 2/32
16. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ – 426-427
17. पातंजल योगदर्शन – 2/44
18. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ - 429
19. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ - 438
20. पातंजल योगदर्शन – 4/34

21. दयानंद ग्रंथमाला पृष्ठ - 441
22. सत्यार्थप्रकाश, नवम समुल्लास, पृष्ठ – 161-165